मैं कौन हूँ?

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,

पूर्व कुलपति, सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

आत्मा सनातन सत्य है। मैं कौन हूँ? कहाँ से आया हूँ? कहाँ जाउंगा? इन प्रश्नों के उत्तर के लिए आत्मचिन्तन करना पड़ता है। इन प्रश्नों का समाधान बाह्‌य जगत में नहीं बल्कि आन्तरिक जगत में खोजना पड़ता है। मैं कौन हूँ? जब यह प्रश्न उपस्थित होता है तो आत्मा की सत्ता सामने आ जाती है। शरीर आत्मा नहीं है। शरीर जड़ पदार्थ है। मैं शब्द के द्वारा जिसका बोध होता है वही आत्मा है। आत्मा सच्चिदानन्द स्वरूप है। शरीर विनासशील है और आत्मा अविनाशी। शरीर को चलाने वाला आत्मा ही है।

यह जगत् दो तत्वों से मिलकर बना है– जड़तत्व और चेतनतत्व। जड़तत्व वह है, जिसमें पूरण और गलन की क्रिया होती है। दर्शन की भाषा में इसे पुद्‌गल या भौतिक तत्व कहते है। आत्मतत्व वह तत्व है जिसमें हलन–चलन कि क्रिया होती है। ये दोनों तत्व शाश्वत हैं। इनके गुण पृथक–पृथक हैं। दोनों को मिश्रण को संसार कहते हैं। शरीर भौतिक तत्वों से बना है। चेतनतत्व इसे संचालित करता है। यदि चेतनतत्व न रहे तो शरीर नष्ट हो जायेगा। आत्मा हर प्राणी में होती है। शरीर के नष्ट होने पर आत्मा एक शरीर को छोड़कर दूसरे शरीर में अपने कर्म के अनुसार चली जाती है। जड़तत्व इस ब्रह्माण्ड में रहता है। जब तक कार्मण शरीर का आत्मा से संबंध रहता है, तब तक जीव को शरीर धारण करना पड़ता है। जब आत्मा कर्मों से मुक्त होती है तो वह मोक्ष को चली जाती है। संयोग, वियोग, सुख, दुःख चलता रहता है।

आत्मसाक्षात्कार के द्वारा जीव मुक्त होता है। इस संसार में अनेक विद्यायें हैं। किन्तु आत्मविद्या सबसे बड़ी विद्या है। जिसको इस विद्या का ज्ञान हो जाता है, उसके लिए कुछ भी अज्ञात नहीं रहता है। जिसने इस विद्या को जान लिया वह सबकुछ जान लेता है। इसलिए कहा गया है– जे एगं जाणइ ते सव्वं जाणइ अर्थात् जो एक को जान लेता है, वह सबको जान लेता है। आत्मा ही एक ऐसा तत्व है, जिसको जान लेने के बाद सबकुछ जान लिया जाता

है। अब प्रश्न उठता है कि आत्मतत्व को जाना कैसे जाये? आत्मतत्व के ज्ञान की अनेक विधियां बताई गयी है। राग–द्वेष रहित होकर आत्मतत्व की प्रेक्षा करने से आत्मतत्व का दर्शन होता है। आत्मा में अनंत ज्ञान, अनंत दर्शन और अनंत सुख का स्रोत है। मानव भौतिक सुखों के प्रति आकृष्ट होकर जीवनभर उसी में लिप्त रहता है और इसी को बहुत बड़ा सुख मानता है। अंदर सुख भंडार इतना विशाल है कि उसका ज्ञान हो जाने पर उसका स्रोत निरंतर प्रवाहित होता रहता है।

मैं कौन हूं? कहां से आया हूं? कहां जाऊंगा? इन तीनों प्रश्नों से आत्मसाक्षात्कार प्रारंभ होता है। मानव अपने आत्मा को जानने का कभी प्रयास ही नहीं करता। उसकी दृष्टि बहिर्मुखी होती है। सत्संग के प्रभाव से शास्त्रों के अध्ययन से और गुरुओं के सान्निध्य से जब मानव का विवेक जागृत होता है तो उसे आत्मतत्व जानने की प्रेरणा मिलती है। संसार का आनंद आत्मतत्व के आनंद का बिंदुमात्र है। आत्मतत्व का आनंद सिंधु के समान है और सांसारिक आनंद बिंदु के समान है। हम बिंदु के आनंद को ही सबकुछ मानकर बैठ जाते हैं। ऋषि, महर्षि, मुनि जो ब्रह्मलीन रहते हैं, वे संसार को मिथ्या समझते हैं। वेदान्त दर्शन में **ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या** का उद्घोष किया गया है। वेदान्त दर्शन के व्याख्याता श्रीमदाद्य भगवान् शंकराचार्य ने आत्मतत्व को सत्य माना और दृश्यमान संसार को मिथ्या। प्राय सभी दर्शनों में आत्मा और जगत् के ऊपर चिंतन हुआ है। कुछ दर्शन दोनों को सत्य मानते हैं, कुछ दर्शन केवल जगत् को ही सत्य मानते हैं और आत्मा की सत्ता में विश्वास नहीं करते। इस प्रकार भिन्न–भिन्न दर्शनों का भिन्न–भिन्न मत हैं।

आत्मतत्व की सत्ता को स्वीकार किये बिना जगत की सत्ता को सिद्ध ही नहीं किया जा सकता। जो लोग जगत को ही सबकुछ मानते हैं, वे कंचन कामिनी के आनंद में ही अपना सबकुछ बिता देते हैं और अमूल्य मानव जीवन को नष्ट कर देते हैं। आत्मसाक्षात्कार की यात्रा कंचन कामिनी के त्याग से प्रारंभ होती है। इसको त्यागे बिना आत्मसाक्षात्कार बड़ा ही दुर्लभ है। मानव का जीवन संसार की आपाधापी में लगा रहता है। जब दुनियादारी से मुक्ति मिलती है तभी आत्मसाक्षात्कार होता है। आत्मासाक्षात्कार ही मानव का प्रमुख धर्म है। आत्म शुद्धि

साधनं धर्म इस परिभाषा के अनुसार धर्म वह तत्व है जिससे आत्मा शुद्ध होती है। आत्मा मूल रूप से ज्ञानस्वरूप है।

श्रीमद्भगवद्गीता जो कि हिन्दू धर्म का एक प्रसिद्ध ग्रंथ है इसमें आत्मा की अजरता अमरता और आत्मसाक्षात्कार का बड़ा दार्शनिक विवेचन किया गया है। इसमें बताया गया है कि शरीर नश्वर है और आत्मा अजर–अमर। जैसे मनुष्य पुराने वस्त्रों को त्यागकर नये वस्त्रों को धारण करता है, वैसे ही आत्मा पुराने शरीर को त्यागकर नये शरीर को धारण करता है। शरीर पंचभूतात्मक है। आत्मा इससे परे है। शुद्ध आत्मा ज्ञान दर्शन और चारित्र से युक्त है। आत्मा अरूपी है किन्तु जब यह शरीर को धारण करती है, तो यह रूपी कहलाने लगती है। यही वास्तविक तत्व है। परमार्थ के मार्ग पर चलने के लिए स्वयं को जानना आवश्यक है। जो आत्मज्ञानी होता है, उसके लिए सम्पूर्ण पृथ्वी ही अपना परिवार होती है। स्व और पर का भेद उसके लिए नहीं होता।